संस्मरण

एक अविस्मरणीय शिक्षक का शिक्षा प्रयोग

❑ एस. आनन्दलक्ष्मी

अनुवाद : देवयानी

डेविड ऑसबरॉ एक अद्‌भुत शख्सियत थे, एक किस्म की परिघटना । यानि गर्मजोशी से भरे जोशीले, रचनात्मक व्यक्ति और करिश्माई शिक्षक । डेविड जन्म से अंग्रेज, वर्ण से भारतीय और मिजाज से विश्व नागरिक थे । डेविड ऑसबरॉ के व्यक्तित्व और शिक्षा-दृष्टि का यह संस्मरणात्मक आकलन कर रहीं हैं एस. आनंद लक्ष्मी, जो उनके निकट सम्पर्क में रही हैं । यह आलेख 'हिन्दू' (14 व 21 सितम्बर'97) में धारावाहिक प्रकाशित हो चुका है, जिसे यहां अनूदित कर छाप रहे हैं ।

गत दशक में स्कूल जाने लायक उम्र के सभी बच्चों को स्कूल की धारा में शामिल करने के लिए व्यापक अभियान चलाया गया। सबको शिक्षा तथा शिक्षा का सार्वजनीकरण जैसे कुछ सरकारी किस्म के नारे भी इस अभियान का अंग बना दिये गये। सभी बच्चों को अनिवार्य अक्षर ज्ञान, अंक ज्ञान तथा कुछ व्यावसायिक दक्षता हासिल हो सके, यह सुनिश्चित करने के प्रयत्न को व्यापक जनसमर्थन भी मिला । हालांकि इस बात से सभी सहमत हैं कि लोकतंत्र में सबको शिक्षा मिलनी चाहिए, फिर भी इसे संभव बनाने के तरीकों पर काफी मतभेद हैं ।

एक मत के अनुसार मौजूदा सभी पाठ्यक्रम ग्रामीण बच्चों के लिहाज से बेहद अजनबी, अप्रासंगिक तथा अव्यावहारिक एवं अनुपयुक्त हैं । जो पुस्तकें ये बच्चे पढ़ते हैं या जो निबन्ध लिखने की उनसे अपेक्षा की जाती है उनमें उनके जीवनानुभव कतई प्रतिबिम्बित नहीं होते । ऐसे में कोई ग्रामीण बालक जब प्राथमिक स्तर की परीक्षा उत्तीर्ण कर के पहली बाधा को पार कर लेता है तो वह अपने परिवार से, अपने समाज से कट जाता है। अधिकांश शिक्षक शहरी होते हैं और ग्रामीण लोगों के प्रति उनके मन में कोई सम्मान का भाव नहीं होता । जाहिर है, ऐसी हालत में किसी ग्रामीण बच्चे का शैक्षणिक अनुभव बहुत अच्छा हो पाये, यह संभावना ही क्षीण हो जाती है । ऐसे में ग्रामीण विद्यालयों के लिए पाठ्यक्रम बनाने की प्राथमिक शर्त उनके रोजमर्रा के जीवन में काम आने वाले मुहावरों का उपयोग करके उनमें ऐसी क्षमताओं का विकास करना है जिन्हें अर्जित कर वे अपने ही परिवेश में बेहतर जीवन तलाश कर सकें ।

एक वैकल्पिक नजरिया यह है कि शिक्षा का प्राथमिक उद्देश्य बच्चे को उन बातों से अवगत कराना है जो वह सामान्यत: नहीं जान पाता । यह शिक्षा ऐसी हो जो एक संकीर्ण, कम सुविधाओं तथा अवसरों वाले समाज में रहने वाले ग्रामीण बालक को आगे बढ़ने में सहायता प्रदान कर सके । इस नजरिए के प्रस्तावकों और समर्थकों का मानना यह है कि हम जो शिक्षा प्रदान करें वह सुविधाविहीन तथा सुविधासंपन्न बच्चों के लिए एक समान अवसर उपलब्ध प्रशस्त करने वाली होनी चाहिए । एक अच्छी शिक्षा ही समाज में व्याप्त असमानता से पार पा सकती है । डेविड ऑसबरॉ का नीलबाग स्कूल का प्रयोग इसी उद्देश्य को समर्पित था । ऐसे में, 5 सितम्बर को शिक्षक दिवस मनाते वक्त इस अदभुत अध्यापक डेविड ऑसबरॉ को स्मरण करने से बेहतर और क्या हो सकता है।

डेविड ऑसबरॉ के निधन को आज चौदह वर्ष बीत चुके हैं । उनका नाम और शख्सियत ऐसी थी जिसे भुला पाना आसान नहीं है । इतने बर्षों बाद भी क्यों कोई डेविड से शिक्षा पर काल्पनिक संवाद करता है ? मैं अपने आप से यह प्रश्न पूछती हूँ । पर मैं यह भी जानती हूँ कि यह सवाल केवल वाक्‌चातुर्य है, क्योंकि इस का जबाव मेरे पास पहले से ही है ।

डेविड ऑसबरॉ एक अद्‌भुत शख्सियत थे, एक किस्म की परिघटना । यानि गर्मजोशी से भरे जोशीले, रचनात्मक व्यक्ति और करिश्माई शिक्षक । पढ़ाने के प्रति उन्हें जबरदस्त मोह था लेकिन भारत में मौजूद तमाम शिक्षा प्रणालियों से उनका मोहभंग हो चुका था । इसी मोहभंग की स्थिति ने उन्हें नीलबाग के विचार को बुनने तथा उस विचार को ठोस रूप से परिणत करने की दिशा में आगे बढ़ाया। इस स्कूल की मूल अवधारणा विभिन्न दर्शनों से ग्रहण की गई थी लेकिन इसका कुल स्वरूप विशुद्ध रूप से डेविड ऑसबरॉ का था और यह अपने आप में अनूठा था ।

डेविड के निजी जीवन की संक्षिप्त जानकारी विभिन्न संदर्भों को समझने में सहायक होगी । ऑसबरॉ जन्म से अंग्रेज, वर्ण से भारतीय और मिजाज से विश्व नागरिक थे । चालीस के दशक के शुरू में हाईस्कूल की शिक्षा समाप्त करने के बाद दूसरे विश्व युद्ध के अंतिम दौर में डेविड रॉयल एअर फोर्स में शरीक हो गए और

भारत भेज दिए गए। उस समय वह भारत के उस इलाके में रहे जो आज बांग्लादेश है । भारत के ग्रामीण जीवन, यहां के लोगों तथा यहां के संगीत के साथ उनके प्यार और लगाव का ऐसा सिलसिला शुरू हो गया जो अगस्त 1984 में उनके निधन तक चलता ही रहा।

युद्ध समाप्त होने के बाद डेविड ने लंदन विश्वविद्यालय के भारतीय इतिहास तथा संस्कृति संबंधी पाठ्यक्रम में प्रवेश लिया । उन्होंने भारत लौटने के अपने लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए संस्कृत, हिंदी तथा उर्दू का अध्ययन किया । लंदन से इस पाठ्यक्रम में डिग्री लेने के साथ ही डेविड भारत लौट आए । शिक्षक होने की प्रबल इच्छा ने डेविड को जे. कृष्णमूर्ति द्वारा स्थापित ऋषि वैली स्कूल की तरफ ठेल दिया । कुछ वर्षों तक वहां काम करने के बाद डेविड नीलगिरि के ब्लू माउंटेन स्कूल में चले गए । बाद में वह मैसूर आ गए, यहां उन्होंने क्षेत्रीय अंग्रेजी महाविद्यालय स्थापित किया व कुछ समय तक उसकी सर्वोच्च जिम्मेदारी संभाली ।

फिर वे ब्रिटिश काउंसिल के अंग्रेजी को दूसरी भाषा के रूप में पढ़ाने के कार्यक्रम को चलाने वाले दल में शामिल हो गये । इस दल में उन्हें मद्रास में कारपोरेशन के एक स्कूल में सुविधा-वंचित वर्ग के बच्चों को अंग्रेजी पढ़ाने की जिम्मेदारी सौंपी गई । यहां उन्हें भारतीय बच्चों की जरूरतों के अनुरूप पुस्तकों एवं कार्य पुस्तिकाओं की योजना तैयार करने का मौका मिला । उनकी विनोदप्रियता तथा स्वभावगत सरसता जिसकी छाप इन पुस्तकों के प्रत्येक पृष्ठ पर देखी जा सकती है - और उनके मौलिक रेखांकनों के कारण ये पुस्तकें बच्चों के लिए बेहद आकर्षक बनीं ।

ब्रिटिश काउंसिल; जो कि ब्रिटश उच्चायोग का एक अभिन्न अंग है; की स्थानान्तरण संबंधी एक नीति है। इस नीति के तहत कोई भी व्यक्ति एक स्थान पर अधिकतम पंद्रह वर्ष तक ही रह सकता है । डेविड को जब अगले पदस्थापन के लिए भारत छोड़ने को कहा गया तो उन्होंने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ले लेना बेहतर समझा। उन्होंने कोलार जिले में आठ एकड़ का एक भूखंड खरीदा और वहां अपने नीलबाग के स्वप्न को मूर्त रूप देना शुरू किया । नीलबाग के पूरे वृत्तान्त को डेविड ऑसबर्रो की लीक से हटी जीवनी की संज्ञा दी जा सकती है । साथ ही इसे ग्रामीण भारत के पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों की स्तरीय शिक्षा के प्रयास का अध्ययन भी कहा जा सकता है ।

डेविड एक पूर्ण व्यक्तित्व थे : उनका दर्शन संपूर्णतावादी था जो उनके कर्म, उनकी जीवन शैली, उनके गीतों, उनके अध्यापन आदि तमाम कार्यों में प्रतिबिंबित होता था । ये तमाम चीजें एक दूसरे में गुथी हुईं थीं । नीलबाग की स्थापना में डेविड ने यह कहना छोड़ दिया कि ''काश मैं ऐसा कर पाता...'' वे वह करने लगे जो करना चाहते थे । अपनी अद्‌भुत प्रतिभा के चलते हुए उन्होंने कई चीजें बहुत ही बेहतर ढंग से की ।

सबसे पहले पेड़ लगाए गए । फिर उनके आस-पास डेविड के द्वारा तैयार डिजायनों व लौरी बैकर की सलाह के आधार पर झौंपड़ियां बनाई गईं । डेविड स्वयं एक कुशल बढ़ई थे और शुरूआत में कक्षाओं के लिए कमरे तथा कार्यशाला का डिजाइन तैयार करने के साथ-साथ उनका निर्माण भी स्वयं उन्होंने ही किया था । इनके साथ ही पारिवारिक आवास भी बनाए गए थे । परिसर की शेष इमारत का निर्माण पाठ्यक्रम का ही एक हिस्सा बन गया। कुछ महीनों के बाद बच्चों ने उस क्षेत्र के पारम्परिक गोल कक्ष (सुतिल्ला) का निर्माण भी किया था ।

नीलबाग की समग्र अवधारणा अध्ययन, अवलोकन, विचार तथा शिक्षण के ऑसबर्रो के लम्बे अनुभवों से छनकर तैयार हुई थी। नीलबाग में आने वाले अक्सर पूछा करते कि यह स्कूल अन्य स्कूलों से भिन्न कैसे है ? इस स्कूल का दर्शन क्या है ? और, क्या नीलबाग की अवधारणा को अन्य स्कूलों में इसी रूप में लागू किया जा सकता है ? डेविड स्वयं पूरे उत्साह एवं साफगोई के साथ विनोद मिश्रण कर इनका उत्तर देते थे ।

वर्ष 1980 का एक कार्यदिवस । मैं सुबह नौ बजे नीलबाग पहुंची। फू स की छाजन वाली एक झोंपड़ी, (जिसमें तीन से अठारह साल तक की उम्र के 25 विद्यार्थी एक साथ बैठ सकते हों) के एकदम स्वच्छ वातावरण में बच्चे बहुत मधुर स्वर में कुछ गा रहे थे । डेविड आगे-आगे गा रहे थे । अन्य तीन शिक्षक उनका साथ दे रहे थे । इन गीतों में एक चौंका देने वाली विविधता थी । गुजराती भजन, असमिया नाविक गीत, केरल का मछुआरा संगीत, अंग्रेजी प्रेमगीत, फ्रेंच तथा जर्मन गीतों के साथ तेलुगु भक्ति संगीत सभी एक साथ प्रवाहित हो रहे थे । यहां हमारे विद्यालयों की तरह प्रत्येक बच्चा अपनी आवाज को सबसे ऊंचा सुनाने के प्रयास में नहीं लगा था बल्कि सभी बच्चे एक लय तथा संयत आवाज में एक दूसरे के साथ स्वर मिलाकर गा रहे थे ।

यहां प्रतिदिन सुबह का एक घंटा संगीत का होता है जिसमें सभी बच्चे साथ होते हैं । इससे सभी को एक दूसरे के साथ तादात्म्य स्थापित कर पाने में मदद मिलती है । रूपकीय एवं वास्तविक दोनों ही अर्थों में । ऑसबर्रो की यह स्पष्ट मान्यता थी कि कोई बच्चा अच्छा गा सके इसके लिए इसे अच्छी तरह से सुनना भी सिखाया जाना चाहिए । पाठ्यक्रम में ही यह भी सिद्धांत रूप में बताया गया था कि शांति के महत्व को समझकर ही कोई बालक ध्वनि के महत्त्व को जान सकता है । गीतों का संग्रह बढ़ता जाता क्योंकि संगीत जानने वाले प्रत्येक आगन्तुक से बालकों को एक नया गीत सिखाने का अनुरोध किया जाता । संगीत के घंटे के बाद बच्चे स्वयं अलमारियों में रखी पाठ्यसामग्री उठा लेते । यह

सामग्री इस तरह विकसित की गई थी कि बच्चे अपने आप अथवा अपने से बड़े बच्चों की सहायता से इन्हें पढ़-समझ सकें। शिक्षक बच्चों की मदद के लिए अथवा उनका ध्यान रखने के लिए तत्पर रहते लेकिन पाठ आरंभ करने वाले केन्द्रीय व्यक्ति के रूप में नहीं।

अंग्रेजी तथा तेलुगु में तैयार की गई इस स्व-शिक्षण सामग्री में अधिकांश हिस्सा कार्ड, पहेलियों तथा स्थानों व गतिविधियों के नामों से जुड़े शाब्दिक खेलों का होता । ऑसबर्रो व अन्य शिक्षकों द्वारा तैयार चित्रों अथवा लिखित रूप में बहुत सावधानीपूर्वक तैयार की गई इस पाठ्य सामग्री का वर्गीकरण उसकी जटिलता के आधार पर किया गया था ताकि बालक प्रत्येक अभ्यास को पूरा करते हुए एक निश्चित मार्ग पर आगे बढ़ सकें । बड़े बच्चों की गणित की कक्षाएं आमतौर पर दोपहर में भोजनावकाश के बाद रखी जार्ती, इस बात पर बल देने के लिए कि यदि स्थितियों का सही संयोजन किया जाए तो दिन का कोई भी भाग जानने तथा सीखने के लिए समान रूप से सही एवं उपयुक्त हो सकता है ।

पाठ्यक्रम के अन्य महत्त्वपूर्ण पक्षों में बालक-बालिकाओं को संगीत सिखाना व उसे रिकार्डर (क्लेरिनेट जैसे आकार-प्रकार के वाद्य) पर बजाना, मिट्टी का काम करना व चाक पर बर्तन बनाना, बढ़ईगिरी का काम करना व वस्तुएं बनाना, कशीदा काढ़ना व क्रेयन (रंगीन चॉक) तथा जलरंगों के साथ चित्र बनाना सिखाया जाना आदि प्रमुख थे । यह लिंगभेद विहीन पाठ्यक्रम का अतिउत्तम नमूना था । इसने मानसिक तथा शारीरिक श्रम के बीच की दूरी को भी मिटाने का काम किया क्योंकि स्कूल की कार्ययोजना में हस्तशिल्प को बहुत महत्वपूर्ण तथा अनिवार्य स्थान दिया गया था। हाथ से काम करना, उसमें दक्षता तथा अचूक सूक्ष्मता लाना, एक बार माटी हाथ में लेने के बाद एक कलात्मक वस्तु तैयार करने की लगन, आरी हाथ में हो तो सफाई के साथ लकड़ी को काटना, आदि को भी पाठ्यक्रम में उतना ही महत्त्व दिया गया था जितना भाषा अथवा गणित को।

शिक्षा केवल दिमाग में घटित होने वाली प्रक्रिया नहीं है बल्कि वह समग्र व्यक्तित्व का निर्माण करती है । बेहतरीन शिक्षा तब ही संभव है जब एक बच्चे को शिक्षकों तथा सहपाठियों के स्नेह के बल पर आत्मसम्मान को विकसित करने का अवसर उपलब्ध हो सके। शिक्षक तथा सीखने वाले के बीच ऐसा विश्वास तथा समझ किसी परिवार में भी दुर्लभ है ।

डेविड ऑसबर्रो कहा करते थे कि उनके सामने अनुशासन की कोई समस्या आती ही नहीं थी क्योंकि अनुशासन पर वहां कतई जोर था ही नहीं । नीलबाग में कोई नियम नहीं थे । सिर्फ एक आचारसंहिता थी जिसके पालन के आदेश नहीं दिए जाते थे बल्कि उदाहरणों के जरिए उसे अभ्यास में लाया जाता था । शिक्षक के लिए इस में ढेरों चुनौतियां तथा जिम्मेदारियां थीं । शनिवार को सुबह 11 बजे का समय स्कूल की साफ सफाई के लिए नियत था। सभी शिक्षकों व छात्रों की यह साझी जिम्मेदारी थी । काम सबके बीच बंटे हुए थे और जिम्मेदारियां बदलती रहती थीं ताकि प्रत्येक व्यक्ति की प्रत्येक काम करने की बारी आये । झाड़-पोंछ, धुलाई, कील गाड़ना, मरम्मत करना, पेंट करना, रद्दी जलाना, ब्लैक बोर्ड काला करना, सभी काम निर्धारित क्रम के अनुरूप होते । शनिवार के दिन वहां सब चुपचाप चींटियों की फौज की तरह अपने-अपने काम में व्यस्त रहते । ऑसबर्रो धोती को घुटनों तक मोड़कर लपेटे, बांधे कहीं सीटी बजाते हुए अपने हिस्से के काम को अंजाम दे रहे होते।

कुल मिलाकर वहां न कोई काम तुच्छ था, न कम महत्त्वपूर्ण, न तो स्कूल का कोई कालांश उबाऊ था और न कोई पाठ अनुपयोगी। डेविड ऑसबर्रो का सिद्धांत यही था कि जो कुछ भी किया जाए पूरी लगन के साथ बेहतरीन ढंग से किया जाये ।

एक और शिक्षाशास्त्रीय सिद्धांत जिसे दृढ़ता के साथ अपनाया गया वह था ऊर्ध्वाधर समूहन (वर्टिकल ग्रुपिंग) का । अधिकांश स्कूलों में उम्र के अनुसार समूह बनाए जाते हैं और इसके पीछे मान्यता है कि एक ही उम्र के बच्चों को एक कमरे में बैठाकर पढ़ाना आसान होता है । लेकिन डेविड ऐसी औपचारिक विधि से पढ़ाने में विश्वास नहीं रखते थे। वे सीखने के लिए सही वातावरण बनाने पर जोर देते । वे अनेक बार एक एक बच्चे से अकेले बातचीत करते तो कई बार बच्चों के किसी समूह को एक साथ भी कुछ सिखाया जाता । लेकिन उनका मानना था कि जब एक ही समूह में सभी उम्र के बच्चों को शामिल कर लिया जाता है तो उनमें एक दूसरे से सीखने और सिखाने की प्रवृति पनपती है और उनके बीच परस्पर प्रतिस्पर्धा कम रहती है । प्रतिभा के निखार के लिए प्रतिस्पर्धा नीलबाग के शिक्षा के सिद्धांत में शुमार नहीं होती। डेविड ऑसबर्रो का मानना था कि समर्थ बनने की इच्छा रखना और कक्षा में दूसरों से बेहतर होने की इच्छा रखना, दो अलग अलग बातें हैं और वे इनमें से पहली पर यकीन करते थे ।

नीलबाग में कभी भी एक समय में तीस से अधिक बच्चे नहीं रहे । जाहिर है ऑसबर्रो आकार को बड़ा बनाने में विश्वास नहीं रखते थे । लेकिन वे मानते थे कि कोई भी नीलबाग जैसा स्कूल चला सकता है । इसी लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए उन्होंने एक शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किया जिसके तहत एक समय में चार शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया जाता।

प्रशिक्षण विद्यालय में पढ़ाते हुए होता था । पर इस का अर्थ यह नहीं है कि केवल विधियां सीखी जाती थीं और सिद्धांत नहीं। प्रशिक्षु शिक्षक को शिक्षादर्शन, मनोविज्ञान तथा शिक्षाशास्त्र की

अनेक पुस्तकों को पढ़ना होता था । उन्हें शिक्षण संबंधी विभिन्न कार्य करने होते थे जिनमे पढ़ी पुस्तकों की विवेचना भी शामिल थी। शिक्षकों को अपनी विचार प्रक्रिया को समृद्ध बनाने तथा ज्ञान को परस्पर बांटने के लिए सेमिनार, परिचर्चा, बहस आदि के अनेक अवसर दिए जाते । यह सब इसलिए जरूरी था कि शिक्षक न केवल चिंतन की आदत डालें बल्कि अपने ज्ञान के सीमांतों का विस्तार भी कर सके । शुरूआत में प्रशिक्षण की अवधि एक वर्ष ही रखी गई थी लेकिन बाद में डेविड ने यह महसूस किया कि इस दर्शन की समझ, सभी पुस्तकों के आलोचनात्मक अध्ययन तथा शिक्षण में पूर्ण आत्मविश्वास व दक्षता अर्जित करने के लिए कम से कम दो साल का समय दिया जाना चाहिए ।

डेविड का मानना था कि कविता जीवन के लिए अनिवार्य है इससे अर्न्तदृष्टि तीक्ष्ण होती है तथा यह संवेदना का विकास करती है । शिक्षा के अपने मानक सिद्धांतों के अनुरूप डेविड हर उस विषय पर बच्चों से भी चर्चा करते जिसे वे मूल्यवान मानते । सप्ताह में दो-तीन बार अंग्रेजी की कविताएं सुनाते - कभी खुद की लिखी हुई भी । जरूरत पड़ने पर वे मुहावरों की छवियों एवं भंगिमाओं का भी खुलासा करते । धीरे-धीरे बच्चे स्वयं डेविड की निजी लाइब्रेरी से कविताएं चुनकर पाठ के लिए देने लगे । बाद के समय में अधिकांश बच्चे स्वयं भी अंग्रेजी में कविताएं लिखने लगे, अधिकांश बच्चों की कविताएं छंद मुक्त होतीं। जब बच्चे अपनी रुचि के विषय पर तेलुगु में भी कविता करने लगे तो डेविड को यह अहसास होने लगा कि उनका लगाया पौधा अब फलने लगा है ।

जो बच्चे सैकण्डरी के स्तर पर पहुंचे वे आन्ध्र प्रदेश की सैकण्डरी की परीक्षा में बैठे और वहां जिन विद्यार्थियों ने मान्यता प्राप्त स्कूलों में अध्ययन न किया हो वे स्वयंपाठी छात्र के रूप में यह परीक्षा दे सकते हैं । नीलबाग को परीक्षा बोर्ड से मान्यता नहीं मिली थी । परीक्षा के लिए बच्चों ने अंग्रेजी, इतिहास व नागरिक शास्त्र विषय चुने, जिन्हें पढ़ने में उन्होंने नीलबाग के शिक्षकों की सहायता ली । इस दौरान भी बच्चों से कम से कम अपना एक तिहाई समय गैर-परीक्षा गतिविधियों में बिताने की अपेक्षा की जाती थी । संस्कृत ऑसबर्रॉ को बहुत प्रिय थी और वे स्कूल में बच्चों को संस्कृत सिखाना जरूरी मानते थे । बच्चे अक्सर संस्कृत में संवाद, कविताएं अथवा लघु-नाटिकाएं पढ़ने के प्रयास करते ।

रंगमंच से जुड़ी गतिविधियां भी पाठ्यक्रम का हिस्सा थीं । साल में एक या दो बार बच्चे शेक्सपीयर के किसी नाटक के किसी एक दृश्य का मंचन करते । नाटक की वेशभूषा तथा अन्य तमाम सामग्री बच्चे ही तैयार करते । मंच पर हाथों से टार्च के द्वारा प्रकाश व्यवस्था की जाती, जिसका संचालन बच्चे आसपास के पेड़ों पर बैठकर करते । डेविड की पुरानी आस्टिन कार की हेडलाइट भी कई बार मंच को प्रकाशित करने के काम आती । इस सारे काम में सभी को बहुत लुत्फ आता। वे सभी पूरी मुस्तैदी के साथ एक अनुशासित टीम की तरह वेशभूषा तैयार करते, साज सज्जा की व्यवस्था करते तथा अपनी भूमिका का निर्वाह करने में अभिनेताओं की मदद करते। विभिन्न अवसरों पर बच्चे बंगलौर तथा मद्रास में बिट्रिश कांउसिल अथवा ऑसबर्रॉ के मित्रों के घरों में भी नाटक का प्रदर्शन करने जाते ।

बच्चों को गृहकार्य दिया जाता लेकिन उसे पूरा करने के लिए निर्धारित समय के मामले में पर्याप्त लचीलापन था । अधिकांश बच्चे अपने माता-पिता के साथ एक-एक झोपड़ी में रहते जहां उन्हें गृहकार्य के लिए पर्याप्त जगह तथा समय मिलना संभव ही नहीं था। इसलिए शाम के समय बच्चे स्कूल आ जाते और यहां के कमरों में किसी बड़े व्यक्ति की सहायता के बगैर अपने गृहकार्य को पूरा करते । रात 9.30 बजे के बाद ऑसबर्रॉ वहां आते और बच्चों के साथ-साथ चलकर उन्हें उनके घरों तक छोड़ आते ।

ऐसी और बहुत सारी जानकारियां दी जा सकती हैं । उनका सिलसिला चलता ही रह सकता है, पर अब हमें इसकी केन्द्रीय विषयवस्तु को देखना चाहिए । कोई भी शिक्षक जिस बात को सर्वाधिक मूल्यवान मानता है उसे ही वह सर्वाधिक अच्छे ढंग से सिखा सकता है । शिक्षण केवल निर्देश देना नहीं है, यह किसी मूल्यवान चीज को शिक्षार्थी के साथ बांटना है । और शिक्षक का बच्चे के प्रति स्नेह पूर्ण व्यवहार यहां बहुत महत्त्वपूर्ण होता है । और इसमें पिग्मेलियन प्रभाव भी दृष्टिगत होता है: जब बच्चों को मेधावी, इच्छुक और उत्साहित माना जाता है तो वे इन अपेक्षाओं को पूरा भी करते हैं । प्रत्येक बच्चे की अपनी प्रतिभा, क्षमता अथवा कमजोरी हो सकती है ।

एक अच्छी प्रणाली किसी भी बच्चे की अपनी रुचियों एवं क्षमताओं के श्रेष्ठतम विकास में मददगार होती है । शिक्षक को अपने विद्यार्थी की सीखने की क्षमता में पूरा विश्वास लेकर चलना होता है और तब प्रत्येक बच्चा अपनी योग्यता के अनुरूप स्वयं अपनी गति से चीजों को सीखता या ग्रहण करता है । किसी एक गतिविधि में पूरे मनोयोग से उत्कृष्टता के लिए जुट जाने की क्षमता का साधारणीकरण किया जा सकता है । इसका तद्नुरूप प्रभाव गतिविधियों के अन्य क्षेत्रों पर भी देखा जा सकता है । और ऐसे करिश्माई शिक्षक, जो संवेदनशील मनुष्य तथा उत्कृष्ट कलाकार भी हों, की मौजूदगी में एक बच्चे के व्यक्तित्व को असीम विस्तार मिल जाता है - एकदम सीमाहीन । ◆